शोध मंथन Vol. XIII No.I Jan.-Mar.2022 ISSN: (P) 0976-5255 (e) 2454-339X
Available at: *http:/shodhmanthan.anubooks.com*

विनोद कुमार शुक्ल के काव्य में सामाजिक संवेदना

प्राप्तिः 16.02.2022
स्वीकृतः 17.03.2022

बीना कुमारी पांडेय
के०ए०एस०एच० 5
कविनगर, गाजियाबाद
ईमेलः *yug_shilpi@yahoo.com*

सारांश

विनोद कुमार शुक्ल का मानना है कि व्यक्ति को जानना महत्वपूर्ण नहीं होता बल्कि उसकी पीड़ा को जानो, समझो और उसके साथ ना चलने के लिए हाथ बढ़ाओ। सही पीड़ा आदमी और आदमी के बीच पुल बनाती है किसी अनजान व्यक्ति की पीड़ा को जानना ही सच्चा जानना है। यही संवेदना है। शुक्ल जी ने अपने काव्य में, सामाजिक समस्याओं में, संवेदनाओं के अनेक पहलुओं को चित्रित किया है।

उनकी कविताओं में दर्शन के सूत्र हैं , मानवीय सभ्यता का इतिहास है, हिंसा है, अकाल है। वह मानव के सामाजिक होते दायरे के हर पहलू का चित्रण करते हैं। पूंजीवाद और उपभोक्तावाद का विरोध करते हुए मध्यवर्गीय आदमी की पीड़ा महसूस करता है।

संवेदनाओं के भीतर घट रहे अनुभवों, स्मृतियों, 'आशंकाओं की कविता जीवन में प्रतिपल है। जिसमें सारे दृश्य अतीत और भविष्य साथ–साथ दिखाई पड़ते हैं। दोनों के घटने से पहले कवि की संवेदना में वह घट जाता है। विनोद कुमार शुक्ल का मानना है कि व्यक्ति को जानना महत्वपूर्ण नहीं होता बल्कि उसकी पीड़ा को जानो, समझो और उसके साथ ना चलने के लिए हाथ बढ़ाओ। सही पीड़ा आदमी और आदमी के बीच पुल बनाती है। जाने–पहचाने की ओर हाथ बढ़ाना तो औपचारिक संबंधों का निर्वाह है अतः किसी अनजान व्यक्ति को पीड़ा को जानना ही सच्चा जानना है। यही संवेदना है। शुक्ल जी ने अपने काव्य में सामाजिक समस्याओं में संवेदनाओं के अनेक पहलुओं को चित्रित किया है ।

इस कविता में जीवन दर्शन का सूत्र है कि जीवन कर्मों, संचित संस्कारों का फल है जो मरने के बाद भी जीवन को बनाए रखता है। एक दूसरे के प्रति सुख और अच्छाई की कामना है इस कविता का मर्म है –

जीवन जीने की ऐसी आदत में
अब मैं मर जाऊंगा
तब कोई कहेगा
शायद मरा नहीं
तब भी मैं मरा रहूंगा
बरसात हो रही होगी
तो जीवन जीने की आदम में

बरसात हो रही होगी
और मैं मरने के बाद
जीवन जीने की आदत में
अपना छाता भूल जाऊंगा।[1]

यह कविता में कवि 'इतिहास बीता हुआ है' को अतीत की तरह और शेष को वर्तमान में देखता है। जिस प्रकार उजाड़ना एक तथ्य है, और उजाड़ने की प्रक्रिया एक प्रवृत्ति है। उजड़ते किले मे भी मनुष्य का वास उसे सुरक्षित रखने की एक तरकीब है। यह नष्ट होने और बनाने की प्रक्रिया उसी प्रकार है जिस प्रकार ग्रामीण जन, बरसात के बाद घर को मिट्टी से छाबने की। ग्रामीणों का घर को बचाने के लिए घर को छाना और छाबना दिखाकर कवि करोड़ों वर्ष पुराने खंडहर हुए धरती और आकाश को बचा लेने की चेष्टा करता है। 'कि कुछ दिनों तक' कविता में कवि का विश्वास उस गरीब आदमी के अच्छे होने पर है जिसे लोग बुरा कहते हैं और न्यायपालिका हत्यारा। कवि कहता है उस आदमी को मैं हमेशा अच्छा समझता हूं उस पर मुझे विश्वास है जितना सत्ता और न्यायपालिका पर भी नहीं।

आदमी के अच्छेपन मे, विशेषताओं से परे उसके आदमी होने में कवि का विश्वास है।

जितना मुझे उस आदमी के अच्छे होने पर विश्वास था
उतना सत्ता और सर्वोच्च न्यायपालिका पर कभी नहीं था।
वह एक गरीब आदमी था।[2]

'दुनिया में अच्छे लोगों की कमी नहीं है' कविता में हमें लेखक की सकारात्मक दृष्टि दिखाई पड़ती है इसलिए कवि को दुनिया में अच्छे लोग दिखाई पड़ते हैं।

मनुष्य द्वारा चीते और अन्य प्रजातियों के शिकार से लुप्त होते जाने की चिंता व्यक्त करता हुआ कवि कहता है कि जिस प्रकार मनुष्यों के बीच चीते के चित्र, घटनाएं और कहानियां ही सुनने और देखने को मिलती हैं उसी प्रकार पृथ्वी और मनुष्य भी नष्ट हो जाएंगे। इसीलिए संपूर्ण पृथ्वी और मनुष्यों को बचाने के लिए स्त्री–पुरुष के प्रेम को छुपाकर रख देना चाहिए ताकि ये भी धीरे–धीरे दुनिया से विलुप्त ना हो जाएं ।

पृथ्वी से क्या कुछ नष्ट नहीं हो गया होगा
और वह सब कुछ है
जिससे नष्ट हो जाएगी पृथ्वी, पृथ्वी शब्द,
पृथ्वी चित्र, पृथ्वी घटनाएं, पृथ्वी कहानियां,
मनुष्य चित्र, मानुश कथा ।
छुपाकर रख देना चाहिए
इस अमावस की आदिम गुफा में
स्त्री पुरुष का प्रेम और सहवास।[3]

लोगों तक पहुंचने की आपाधापी में कवि और लोगों से पीछे रहता है। लेकिन वह स्पर्धा में नहीं हैं। अपने सूनेपन को वह व्यर्थ नहीं मानता। हंसी, खुशी से भरती जाती दुनिया के लिए वह कुछ

खाली जगह बचा कर रखना चाहता है यही कवि के सोच का वैशिष्ट्य है। इस कविता में कवि विरोधाभास में अर्थ की गरिमा देते देता हुआ कहता है कि जिसे हम सुनसान कहते हैं वह भी अकेला नहीं होता हमें अपने से भरता है।

'चित्रकार को मेरी कविता पसंद नहीं 'विरोधाभास देती एक ऐसी कविता है जिसमें चित्रकार को और संगीतकार को कवि की कविता पसंद नहीं आती, लेकिन कवि को उनके चित्र और उनका संगीत पसंद है। कवि की कविता दिन में दिन के उजाले का रंग देखती है तो रात में रात के उजाले को भी। विरोधाभास में रात का यही उजाला शायद अंतर का कारण है। कवि के अनुसार अंधेरा रात का ही नहीं होता दुनिया में तो दिन–रात का अंधेरा है। अंधेरे में उजाला देखना शायद कवि का आशावाद है। दुनिया को घेरे इस अंधेरे को भी कवि तबूरा या एकतारा (ध्रुव के समान) बताकर उजाले का राग छेड़ता है। चित्र या संगीत की तुलना में उसकी है दृष्टि रचनात्मकता के आयाम के कारण ही आगे है–

चित्रकार को मेरी कविता पसंद नहीं
दिन में दिन के उजाले का रंग
रात में रात के उजाले का
अंधेरा तो दिन रात का है।[4]

कवि ने ऐसे व्यक्तियों की तरफ इशारा किया है जो फुर्सत का बहाना करके चुपचाप बैठे रहते हैं और परिणामस्वरुप 'कुछ भी ना कर सके' कहकर अपने जीवन में केवल असहायता, अकेलापन, अलगाव, निराशा के सिवाय कुछ प्राप्त नहीं कर पाते। स्थिति यह हो जाती है कि व्यक्ति आत्महत्या नहीं करता, दुनिया को नहीं छोड़ता, फिर भी वैसा बना रह जाता है।

कविता 'बहुत कुछ कर सकते हैं' एक स्थिति का चित्रण है, एक मनः स्थिति का चित्रण है और ऐसी मनः स्थिति पर प्रश्न चिन्ह भी है कि क्यों आज व्यक्ति इस तरह होता जा रहा है ? जीवन के प्रति आशा और आत्मविश्वास ही व्यक्ति को सफल बनाता है–

हर किसी आदमी से अकेला छूट रहा हूं
सबसे छूट रहा हूं
एक चिड़िया भी
सामने से
उड़कर जाती है
अकेला छूट जाता हूं।[5]

छोटी बच्ची का पिटना और उसका हाथ टूट जाना, साइकिल का पंचर होना और रुककर पंक्चर सुधरवाना आदि रोजमर्रा की घटनाओं के साथ, कवि उस घटना को भी साधारण कहता है जिसमें दफ्तर की एक लड़की को, दफ्तर के उसके साथियों के सामने ही चार गुंडे उठाने लगते हैं लेकिन वे उसे बचाने की बजाय बस में बैठ कर चले जाते हैं–

दफ्तर में छः बजे छुट्टी होती है
जो सात बजे हुई साधारण
सबके साथ घर जाने को बस के लिए खड़ी

दफ्तर की लड़की को अचानक
चार गुंडे आकर जबरदस्ती ले जाने लगे
तभी बस आई
तब दफ्तर के लोग भी उसी बस में बैठ गए
साधारण।[6]

उदारीकरण, बाजारवाद, उपभोक्तावाद और भूमंडलीकरण हमें अपनी जड़ों से काटकर एक ऐसे समाज में धकेलता जा रहा है जो संस्कृतिविहीन हैं। पूंजीवाद और उपभोक्तावाद का विरोध करते हुए मध्यवर्गीय आदमी की पीड़ा महसूस करता है कवि सब्जी बाजार में, जहां गरीब सब्जी वाले हैं और अमीर महंगे खरीददार।

लेखक की चाह यहां घर का होने की है, उन अमीर खरीददारों के वर्ग से हटकर गरीब निम्न मध्यवर्ग की होने की है।

'बाजार से खरीदी गई है' कविता में एक पिता का बच्चों के प्रति स्नेह और चिंता कवि ने व्यक्त की है। एक ओर तो बाजार में टगी हुई गोलमटोल बच्चों की रंगीन तस्वीर उसे अपनी और आकर्शित करती है ।

'उस अधूरे बने मकान के पीछे' कविता में पुरातन समाज की स्मृति के साथ आधुनिक संवेदना का संस्पर्श मिलता है। एक तरफ कवि जहां मकान, प्राचीन मंदिर, झोपड़ी, पान की दुकान, बावड़ी, मूंगफली वाले, डाब बेचने वाली बुढ़िया आदि को देखता है तो दूसरी तरफ उसे आठवीं शताब्दी का अंधेरा दिखाई पड़ता है, जहां वहां वह चाय की दुकान के दरवाजे को खटपटाता है और दरवाजा खुलने पर गरीब शिव की लड़की ढिबरी लिए दिखाई देती है।

अंधेरा हुआ
आठवीं शताब्दी के अंधेरे की तरह
मुझे लगता है वही चाय की दुकान होगी
उसके पुराने जर्जर दरवाजे को खटखटाता हूं
दरवाजा खुलता है
यह दरवाजा भी मंदिर का है
एक गरीब छोटी लड़की
ढिबरी लिए खड़ी है
यह एक छोटा सा बहुत गरीब शिव का घर है ।[7]

अकाल के समय गांव के लोगों का गांव से पलायन करने की बात की ओर संकेत करता हुआ कवि सूखे कुएं से उस गांव की तुलना करता है। जिस तरह कुएं में रहता है, वह भरा हुआ रहता है उसी प्रकार गांव में लोगों के रहने से गांव आबाद रहता है लेकिन पलायन करने पर गांव उजाड़ हो जाता है –

'गाड़ी से उतरते ही' कविता कवि की गहरी सामाजिक चिंता को व्यक्त करने वाली कविता है। कभी अपने चाचा के घर आता है यह बताने के लिए लेकिन वहां पहुंचते ही सब उससे यही पूछते

हैं वहां पानी गिरी? और वह भी अंत में यह बता पाता है कि अम्मा बीमार हैं। यह कविता इस तथ्य को उजागर करती है कि सामाजिक चिंताओं के बीच व्यक्ति और उसकी चिंताएं महत्वपूर्ण होकर भी जैसे महत्व खो देती हैं।

'कितने सुरक्षित हो गए' कविता में कवि की गोली, बंदूक और हिंसा के प्रति वितृष्णा व्यक्त होती है। एक तरफ तो वह कहता है कि किसी को गोली नहीं लग सकती लेकिन घर के अंदर वह सारे खिड़की, दरवाजे बंद करके रहता है और गोली शब्द पढ़कर ही सहम जाता है। वह सोचता है कि उसे गोली लगी। इसी प्रकार रास्ते में मोटर से टकरा जाने पर खून निकलने लगता है उसे भी वह गोली लग गई समझता है। आज आम आदमी कितना असुरक्षित हो गया है। उसके बचने और जिंदा रहने को कवि अभ्यास की तरह जीना कहता है जिसमें उसे केवल अपने को बचाने के अलावा किसी दूसरे को बचाने की कोशिश भी नहीं होती।

आज हमारी समाज– व्यवस्था में जो हिंसा व्याप्त है उसे देखकर विनोदकुमार शुक्ल यह भी नहीं भूलते कि दाढ़ी बनाने की ब्लेड भी एक हथियार हो सकती है–

एक नई ब्लेड लेकर मैंने पूरी गंभीरता से कहा था
कि अंधेरा शायद नकली दाढ़ी–मूछ लगाकर
आया होगा
देश की सुरक्षा के लिए चारों दोस्तों ने
और मैंने
पांच नई ब्लेड बतौर हथियार के
समर्पित किए या आत्मसमर्पण किया था ।
क्रांति हम लोगों से नहीं हुई थी।[8]

संदर्भ

1. शुक्ल, विनोद कुमार. (2014). अतिरिक्त नहीं; वाणी प्रकाशन पृष्ट **27.**
2. शुक्ल, विनोद कुमार. (2014). अतिरिक्त नहीं; वाणी प्रकाशन पृष्ट **5.**
3. शुक्ल, विनोद कुमार. (1992). सब कुछ होना बचा रहेगा, राजकमल प्रकाशन पृष्ठ **82.**
4. शुक्ल, विनोद कुमार. (1992). सब कुछ होना बचा रहेगा, राजकमल प्रकाशन पृष्ठ **57.**
5. शुक्ल, विनोद कुमार. (1992). सब कुछ होना बचा रहेगा, राजकमल प्रकाशन पृष्ठ **41.**
6. शुक्ल, विनोद कुमार. (2014). अतिरिक्त नहीं; वाणी प्रकाशन पृष्ठ **67.**
7. शुक्ल, विनोद कुमार. (2014). अतिरिक्त नहीं; वाणी प्रकाशन पृष्ठ **47.**
8. शुक्ल, विनोद कुमार. (1981). वह आदमी गरम कोट पहनकर चला गया–विचार की तरह–राजकमल प्रकाशन पृष्ठ **13.**